International Journal of Education and Science Research Review
E-ISSN 2348-6457
Volume-2, Issue-6 December- 2015
P-ISSN 2349-1817
www.ijesrr.org
Email- editor@ijesrr.org

भारत में ग्रामीण स्थानीय स्वशासनः 1947 से 73 वें संविधान संशोधन तक पंचायती राज की यात्रा का विश्लेषण

(Rural Local self government in india: An Analysis of journey of panchayati Raj since 1947 to 73rd constitution Amendment)

Ashok Kumar
Lecturer in Sociology
M.S.J. College, Bharatpur, (Rajasthan)

स्थानीय सरकारों के संबंध में ब्रिटिश सरकार ने कानूनों द्वारा औपचारिक स्थानीय स्वशासन की शुरुआत की, जिसने परम्परागत 'सामुदायिक पंचायतों' को खत्म नहीं किया तो कमजोर अवश्य किया। यद्यपि 1882 में ब्रिटिश सरकार द्वारा लागू किये गये 'रिपन प्रस्ताव' का घोषित उद्देश्य लोगों को नागरिक सेवाओं में जोड़ना और लोकतांत्रिक सिद्धांत का विस्तार करना था। लेकिन ब्रिटिश सरकार का वास्तविक उद्देश्य कुछ अलग था। बंदोपाध्याय,घोष एवं घोष (2007) के अनुसार इन 'स्थानीय सरकारों का इरादा थाः (i) पूर्ण राजनीतिक और आर्थिक एकीकरण प्राप्त करना, (ii) ग्रामीण इलाकों में विश्वसनीय और निरंतर सूचना नेटवर्क स्थापित करना (iii) सरकार के साथ मिलकर काम करने के लिए बिचौलिए और समृद्ध वर्गों की भर्ती करना और जोड़ना, (iv) सार्वजनिक सेवाओं को बनाए रखने और गैर–कर राजस्व से बुनियादी ढांचे की स्थापना के लिए स्थानीय संस्थाओं को जिम्मेदार बनाकर प्रांतीय सरकारों को वित्तीय संकट से उबारना।' स्थानीय स्वशासन, जैसा कि आधुनिक विमर्श में समझा जाता है, वास्तव में भारत में ब्रिटिश शासन के उत्तरार्ध के दौरान उभरा। ब्रिटिश काल में 1880 से 1884 के बीच का लार्ड रिपन का कार्यकाल पंचायती राज का स्वर्णिम काल माना जाता है। इसने स्थानीय निकायों को बढ़ाने का प्रावधान किया।

स्वतंत्रता के बाद इस पर गंभीर चर्चा संविधान सभा में हुई। एक तरफ गांधीवादी नेता गांव स्तर पर स्वशासन के गांधी जी के सपनों को साकार करने के लिए जोर दे रहे थे। राजेन्द्र प्रसाद, महावीर त्यागी, प्रकासम जैसे आदि नेता आम लोगों के सशक्तिकरण, पंचायतों को सत्ता हस्तांतरण के पक्षधर थे। लेकिन दूसरी तरफ अंबेडकर जैसे नेता गांव स्तर पर सत्ता के हस्तांतरण के खिलाफ आवाज बुलंद कर रहे थे। इनका मानना था कि गांव सामाजिक भेदभाव के पोषक रहे हैं इसलिए गांव स्तर पर सत्ता का विकेंद्रीकरण होने से साधन संपन्न और उच्च जातियों का कब्जा हो जाएगा और फिर पंचायती राज साधनविहीन लोगों और निम्न जातियों के शोषण और उनके विरुद्ध अत्याचार का नया अवतार हो सकता है। उनका मानना था कि ''गांव संकीर्णता, अज्ञानता, अंधविश्वास, साम्प्रदायिकता व निम्न स्वार्थों की पूर्ति का अड्डा हैं। ग्रामीण गणतंत्र के कारण भारत का नाश हुआ है... विकेंद्रीकरण से अन्याय व अत्याचार बढ़ेगा, रूढ़िवादी, कट्टरपंथी सत्ता हथिया लेंगे (अंबेडकर 1967)।'' ''लंबी और गहन बहस के परिणामस्वरुप संविधान में अनुच्छेद–31–क जोड़ा गया जो बताता है कि 'राज्य, ग्राम पंचायतों के संगठन के लिए कदम उठाएगा और उन्हें ऐसी शक्तियां और प्राधिकार प्रदान करेगा जो उन्हें स्वायत्त शासन की इकाई के रूप में कार्य करने के लिए समर्थ बनाने में आवश्यक होगी।' इस अनुच्छेद को बाद में संख्यांकित करके अनुच्छेद 40 किया गया तथा यह राज्य के नीति निर्देशक सिद्धांतों का भाग बना। लेकिन पंचायती राज व्यवस्था को संवैधानिक दर्जा न देकर राज्य सरकारों के रहमो करम पर छोड़ दिया गया । अधिकार और कर्तव्य की दृष्टि से यह दंत–विहीन ही रहा।

स्वतंत्रता प्राप्ति के समय भारत की लगभग 80% प्रतिशत जनसंख्या ग्रामों में निवास करती थी। जनसंख्या के इतने बडे भाग की सामाजिक–आर्थिक समस्याओं का प्रभावपूर्ण समाधान किये बिना हम देश के विकास के लक्ष्य को किसी प्रकार भी पूरा नहीं कर सकते। भारत में स्वतन्त्रता के बाद से ही एक ऐसी वृहत योजना की आवश्यकता अनुभव की जाने लगी जिसके द्वारा ग्रामीण समुदाय में अशिक्षा, निर्धनता, बेरोजगारी, कृषि के पिछडेपन, गन्दगी तथा रूढ़िवादिता जैसी समस्याओं का समाधान किया जा सके। भारत में ग्रामीण विकास के लिए यह आवश्यक था कि कृषि की दशाओं

में सुधार किया जाये, सामाजिक तथा आर्थिक संरचना को बदला जाये, आवास की दशाओं में सुधार किया जाये, किसानों को कृषि योग्य भूमि प्रदान की जाये, जन–स्वास्थ्य तथा शिक्षा के स्तर को ऊँचा उठाया जाये तथा दुर्बल वर्गों को विशेष संरक्षण प्रदान किया जाये। इन उद्देश्यों को प्राप्त करने हेतु गांधी जी के जन्मदिन 2 अक्टूबर 1952 को 'सामुदायिक विकास कार्यक्रम' तथा 1953 में 'राष्ट्रीय प्रसार कार्यक्रम' शुरू किए गए। दुर्भाग्यवश दोनों ही कार्यक्रमों से वांछित परिणाम नहीं मिल सके। इसका मुख्य कारण यह रहा कि ये जनता के कार्यक्रम न बनकर नौकरशाही द्वारा क्रियान्वित सरकारी कार्यक्रम बन गये। आमजन कार्यक्रम की भावना एवं उद्देश्यों को नहीं समझ सके और दूसरी तरफ कार्यक्रम के क्रियान्वयन में उनकी सहभागिता नहीं रही। इस प्रकार ग्रामीण समाज इनके प्रति उत्साहित नहीं रहा। 'सामुदायिक विकास कार्यक्रम' की असफलता के कारणों का पता लगाने और उनको दूर करने के लिए सुझाव देने हेतु पांच वर्ष बाद 1957 में बलवंत राय मेहता की अध्यक्षता में एक समिति का गठन किया गया। समिति ने अपने प्रतिवेदन में कहा कि स्थानीय ग्रामीण स्तर पर प्रजातांत्रिक ढांचे की कमी कार्यक्रम की विफलता का मुख्य कारण है। समिति ने टिप्पणी की कि ''जब तक हम स्थानीय स्तर पर उचित शक्ति, अधिकार, दायित्व व वित्तीय संसाधन के साथ प्रतिनिधि व प्रजातांत्रिक संस्थाओं का विकास नहीं करेंगे तब तक हम विकास के लिए स्थानीय लोगों की रूचि व स्थानीय पहल को प्राप्त करने में सफल नहीं होंगे (GOI-1957)।''

मेहता समिति ने लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण की त्रि–स्तरीय व्यवस्था की सिफारिश की। गांव स्तर पर ग्राम पंचायत, खण्ड स्तर पर पंचायत समिति व जिला स्तर पर जिला परिषद । खण्ड स्तर पर पंचायत समिति को सबसे प्रभावशाली निकाय व लोकतान्त्रिक विकेन्द्रीकरण की मूल इकाई परिकल्पित की गई। जिला कलक्टर की अध्यक्षता वाली जिला परिषद एक सलाहकारी संस्था के रूप में स्थापित करने की सिफारिश की। इस समिति ने ही पहली बार विकेंद्रीकरण के साथ लोकतांत्रिक शब्द जोड़ा। मेहता समिति की सिफारिशों को स्वीकार कर लिया गया और 2 अक्टूबर 1959 को तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री जवाहर लाल नेहरू ने राजस्थान के नागौर में वैधानिक पंचायती राज का शुभारंभ किया। समिति द्वारा सुझाए गए लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण को नेहरू जी ने 'पंचायती राज' नाम दिया। मैथ्यू (2002) के अनुसार 'यहीं से स्वतंत्र भारत में पंचायती राज संस्थाओं की प्रथम पीढ़ी की शुरुआत हुई।' यहां यह उल्लेखनीय है कि स्थानीय स्वशासन को बढ़ावा देने के लिए पंचायती राज मॉडल से अच्छा मॉडल हो ही नहीं सकता था। एक तो पंचायतें आदिकाल से हमारे शासन व ग्रामीण जीवन का अभिन्न अंग रही हैं, दूसरे इसकी स्वीकार्यता की संभावना ज्यादा थी, क्योंकि इस व्यवस्था के प्रति विश्वास एवं सम्मान का भाव हमारे देश में सदियों से रहा है।यह राष्ट्रीय नेतृत्व का एक दुरदर्शितापूर्ण कार्य था। ''पंचायती राज प्रणाली निर्णय लेने वाले केंद्रों और कार्यवाही के केंद्रों के बीच की खाई को पाटने के लिए एक अभिनव तंत्र है ।

समिति की लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण की अवधारणा व्यापक थी। समिति ने कुछ निश्चित कार्यों एवं जिम्मेदारियों को सूचिबद्ध कर स्थानीय स्तर के अंगों द्वारा लागू किये जाने पर जोर दिया। और साथ ही यह भी अपनी रिपोर्ट में बताया कि राज्य इन सूचिबद्ध कार्यों में हस्तक्षेप न करे। फिर भी समिति ने राजनीति को विकेंद्रीकृत करने पर ध्यान नहीं दिया। यह सामुदायिक विकास कार्यक्रमों (सीडीपी) और राष्ट्रीय विस्तार सेवाओं (एनईएस) के सफल कार्यान्वयन के प्रति जुनूनी थी और इसने मध्य स्तरीय(खंड स्तरीय) पंचायत राज संस्था– पंचायत समिति– को महत्वपूर्ण भूमिका प्रदान करने के लिए प्रेरित किया । इसके अलावा, समिति ने पंचायतों को केवल विकासात्मक कार्यों के हस्तांतरण की सिफारिश की और नियामक (Regulatory) कार्यों को नौकरशाही को सौंपने का काम किया। यह विडंबनापूर्ण ही रहा कि स्थानीय स्तर पर जहां स्वशासन विकसित करने की बात थी वहां नियामक कार्यो को नौकरशाही को सौंपकर स्थानीय स्वशासन के सिद्धांत को कमजोर करने का काम किया गया। लेकिन स्वतंत्र भारत में वैधानिक पंचायती राज संस्थाओं की शुरुआत की बुनियाद रखने का श्रेय मेहता समिति को ही है।

पंचायतों की वित्तीय स्थिति की समीक्षा के लिए गठित के० संथानम समिति (1963) ने सभी राज्यों में पंचायतों को भूराजस्व, गृहकर आदि विशेष 'कर' लगाने की शक्ति देने की सिफारिश की। आरम्भ में पंचायती राज संस्थाओं के प्रति उत्साह एवं आशा का माहौल बना, और ग्रामीण जीवन व सामाजिक संरचना पर इसका प्रभाव भी परिलक्षित हुआ।

सामान्य तथ्य के रूप में गांवों में युवा व बेहतर वैकल्पिक नेतृत्व उभरने लगा (GOI–1965)। ऐसे बहुत संख्या में लोग नेतृत्व में आगे आये जिनकी परम्परागत सामाजिक संरचना के प्रभाव के कारण राजनीतिक व प्रशासनिक तन्त्र में पहुंच नहीं थी (एल०पी० शुक्ला 1964)। लोग महसूस करने लगे कि उनके पास अपने भविष्य को बदलने की शक्ति आ गयी है (AVARD 1962)। बी0 माहेश्वरी (1963) का निष्कर्ष है कि पंचायतें स्थानीय शासन के कार्य सम्पादित कर रही है और प्रजातन्त्र की प्राथमिक पाठशाला सिद्ध हो रही है। उक्त निष्कर्ष पंचायत के सकारात्मक प्रभावों को स्पष्ट करते हैं। लेकिन कालांतर में ये पंचायतें शिथिल पड़ने लगी।

प्रथम पीढी की पंचायतों ने वह कार्य नहीं किया जिसकी परिकल्पना की गई। थी। केन्द्र सरकार ने बहुत से प्रायोजित कार्यक्रम शुरू किये। जैसे गहन कृषि जिला कार्यक्रम (IADP), लघु किसान विकास एजेंसी (SFDA), सूखा प्रवण क्षेत्र कार्यक्रम (DPAP), गहन जनजाति विकास कार्यक्रम (ITDP) आदि के अलावा बहुत से गरीबी उन्मूलन एवं रोजगार सृजन कार्यक्रम शुरू किये। ये कार्यक्रम केन्द्रीय सत्ता द्वारा संचालित और पूरे देश में एकरूप ढंग से लागू किये गये। जबकि क्षेत्र, संस्कृति संसाधन, बेरोजगारी की मात्रा व प्रकृति की दृष्टि से विविधतापूर्ण भारत में इसके अपने खतरे हैं। कार्यक्रमों को केन्द्र में बैठे कुछ लोगों द्वारा तैयार करके नौकरशाही को क्रियान्वयन के केन्द्र में रखकर लागू किया गया और जनसाधारण की इसमें कोई भागीदारी नहीं रही। पंचायतों को इनसे सम्बद्ध नहीं किया गया। पंचायतों को पुर्नजीवित करने के लिए 1977 में जनता पार्टी सरकार ने अशोक मेहता की अध्यक्षता में एक समिति गठित की जिसने 1978 में अपनी रिपोर्ट दी। समिति ने पंचायती राज के अब तक के अनुभव के आधार पर 1959 से आगे के काल को तीन चरणों में बांटकर विश्लेषण किया–

(i) पंचायत का उत्थान काल (1959–64)
(ii) पंचायत का स्थिरता/शिथिलता काल (1965–69)
(iii) पंचायत का पतन काल (1969–77)

समिति ने पंचायतों की इस स्थिति के लिए (i) राजनीतिक इच्छा शक्ति का अभाव, (ii) नौकरशाही (iii) योजनाओं में आम जनता की भागीदारी की कमी (iv) पंचायत की भूमिका व प्रस्थिति के बारे में भ्रम (v) ग्रामीण अभिजात्य वर्ग का प्रभुत्व आदि को उत्तरदायी माना (हूजा 2010)। इसके अतिरिक्त इन संस्थाओं को पर्याप्त शक्ति व वित्तीय संसाधनों की कमी, नियमित चुनाव न होना, हरित क्रान्ति व भूमि सुधार अधिनियम से लाभान्वित नवीन कृषक वर्ग व उच्च जाति के लोगों का ग्राम पंचायतों पर नियन्त्रण स्थापित हो गया। हाशिये पर रहे लोगों– दलित, जनजाति व महिला – की पहुंच में ग्राम पंचायतें नहीं आयी। ग्राम सभा मजाक बनकर रह गई (मैथ्यू 2002) ।

अशोक मेहता समिति ने पंचायत चुनाव में राजनीतिक दलों की सहभागिता की सिफारिश की, जबकि बलवन्तराय मेहता समिति ने पंचायत चुनाव से राजनीतिक दलों को दूर रहने की वकालत की थी। यहां नौकरशाही के स्थान पर राजनैतिक तत्व पर जोर दिया गया। मैथ्यू (2002) के अनुसार बलवंत राय मेहता समिति ने पंचायतों को विकास केन्द्रित रखा था, जबकि अशोक मेहता समिति ने पंचायतों को एक प्रामाणिक राजनीतिक संस्था बनाने का प्रयास किया। स्थानीय स्तर पर पंचायत विकास के संगठन के साथ–साथ राजनीतिक संगठन में परिवर्तित हो गयी। नौकरशाही के स्थान पर राजनैतिक तत्व पर ज्यादा जोर दिया गया। अशोक मेहता समिति की रिपोर्ट ने प्रजातान्त्रिक विकेन्द्रीकरण में रूचि पैदा की। पश्चिम बंगाल, कर्नाटक, आन्ध्र प्रदेश तथा जम्मू एवं कश्मीर में शक्ति और योजना के विकेन्द्रीकरण के अधिनियम बने । इनमें पश्चिम बंगाल एवं कर्नाटक के अधिनियमों का ज्यादा महत्व है। क्योंकि इन राज्यों में योजना के विकेन्द्रीकरण पर ज्यादा ध्यान केन्द्रित किया गया। यहीं से द्वितीय पीढ़ी की पंचायतों की शुरूआत हुई (मैथ्यू 2002)। इस समिति का सुझाव था कि क्योंकि ग्राम पंचायतें अपने दायित्वों का निर्वहन करने में असफल रही हैं। इसलिए त्रि–स्तरीय व्यवस्था के स्थान पर द्वि–स्तरीय व्यवस्था – जिला स्तर पर जिला परिषद एवं कई गांवों के समूह पर मण्डल पंचायत – की सिफारिश की। बलवन्त मेहता समिति के विपरीत पंचायत समिति के स्थान पर जिला परिषद को समस्त विकास कार्यों का केन्द्र बिन्दू बनाया। इसमें ग्राम पंचायत के वैधानिक अस्तित्व को ही समाप्त कर दिया।

दोनों समितियों के प्रतिवेदनों में ग्राम पंचायत की भूमिका को नजर अंदाज किया गया और विकेन्द्रीकरण को गांवो तक लाने पर ज्यादा ध्यान नहीं दिया गया।

स्थानीय स्वशासन में लगातार सुधार की दृष्टि से समय–समय पर सरकार द्वारा विभिन्न समितियों का गठन किया जाता रहा है। 1984 में 'जिला योजना' पर गठित सी०एच० हनुमंथराव समिति ने जिला स्तर पर योजना बनाने व लागू करने पर विस्तृत रिपोर्ट दी। जी.वी.के. राव समिति (1985) ने ग्राम विकास योजना निर्माण व क्रियान्वयन में पंचायती राज संस्थाओं की भूमिका तथा विकास कार्यों में जनसाधारण की भागीदारी बढ़ाने पर जोर दिया। एल०एम० सिंघवी ने पंचायतों को संवैधानिक दर्जा देने तथा योजना व विकास कार्यों में आम लोगों की सहभागिता एवं ग्राम सभा के महत्व पर जोर दिया। थुंगन समिति (1988) ने पंचायती राज संस्थाओं को मजबूत करने, वित्त आयोग का गठन करने, इन्हें संवैधानिक दर्जा देने व नियमित चुनाव कराने की सिफारिश की।

स्थानीय निकायों के क्रियाकलापों को राज्य की मर्जी पर छोड़ दिया गया था । स्थानीय निकायों को सीमित मात्रा में निर्बन्ध (Untied) अनुदान दिया गया (घोष 1988, मुखर्जी एवं बंध्योपाध्याय 1993)। ये पंचायतें सरकार के शिंकजे में कैद हो गई। वास्तविक सत्ता सरकारी कर्मचारियों के हाथ में रही और वे अनुदान से लाभान्वित होती रही। भूपति व पहले से सम्पन्न लोगों का प्रभुत्व बना रहा। आमजन इससे लाभान्वित नहीं हो सका (थानवी 2002)। पंचायती राज के स्थान पर सरपंच–सचिव राज स्थापित हो गया।

विकास के ऊपर से नीचे के प्रारूप की असफलता, उदारीकरण व भूमण्डलीकरण के दौर में राज्य की सिकुड़ती भूमिका, पंचायती राज के स्थान पर ''सरपंच राज' की स्थापना, व्यापक भ्रष्टाचार, सुशासन की अवधारणा का प्रचार प्रसार, विभिन्न समितियों के प्रतिवेदनों की अनुशंसा आदि कारणों व तत्कालीन परिदृश्य की पृष्ठभूमि में 1989 में तत्कालीन प्रधानमंत्री राजीव गांधी ने 'समाजवादी योजनाबद्ध ग्रामीण विकास' के स्थान पर 'जनतन्त्रीय सत्ता हस्तान्तरण से स्वविकास' का मार्ग प्रशस्त करने व अब तक की कमियों को दूर करने के उद्देश्य से 64 वां संविधान संशोधन विधेयक पेश किया (थानवी 2000)। यह राज्य सभा में पारित नहीं हो सका। हालांकि प्रजातान्त्रिक विकेन्द्रीकरण की दिशा में यह विधेयक एक स्वागत योग्य कदम था, लेकिन इसमें कुछ कमी थीं– (i) इसमें राज्य की अनदेखी की गई थी। केन्द्र सरकार सीधे पंचायतों से सम्पर्क करती। यह संघीय ढांचें की प्रकृति के अनुकूल नहीं था। (ii) ग्रामसभा की कोई व्यवस्था नहीं दी गयी थी। (iii) इसने पूरे देश में एक समान पद्धति व ढांचा थोप दिया था। इसके बाद 1991 तक आते आते सभी राजनीतिक दल पंचायती राज संस्थाओं को मजबूत करने के पक्ष में थे। इसलिए 64 वें संशोधन विधेयक की कमियों को दूर करते हुए 1992 में 73वां संविधान संशोधन दोनों सदनों से पारित होकर अप्रैल 1993 में राष्ट्रपति की स्वीकृति के उपरान्त अस्तित्व में आया। (मैथ्यू 2002) के अनुसार यहीं से ग्रामीण स्थानीय स्वशासन की तीसरी पीढ़ी की शुरूआत हुई। यहां पर उल्लेखनीय है कि यह ऐतिहासिक अधिनियम किसी आन्दोलन या आमजन की मांग का परिणाम न होकर केन्द्रीय नेतृत्व की राजनीतिक इच्छा शक्ति व इस मान्यता का परिणाम है कि विकास के अब तक के संस्थात्मक प्रयास वांछित परिणाम नहीं दे सके। यह अब तक प्रचलित धारणा व अध्ययनों के इस निष्कर्ष कि पंचायती राज संस्थाओं को मजबूत करने में राजनीतिक इच्छा शक्ति का अभाव रहा है, को नकारती है।

उपरोक्त विश्लेषण से निष्कर्ष निकलता है कि पंचायतों का विकास पूर्व ब्रिटिश काल में पारंपरिक, सत्तावादी व अनौपचारिक पंचायत के रूप में, ब्रिटिश काल में कानूनी औपचारिक व अर्द्ध प्रजातान्त्रिक पंचायत के रूप में तथा स्वतन्त्र भारत में अब संवैधानिक व सहभागी प्रजातान्त्रिक पंचायतों के रूप में हुआ है।

तीसरी पीढ़ी की पंचायतों को संवैधानिक दर्जा प्राप्त है। यह स्थानिय स्वशासन की संस्थाएं मूलभूत परिवर्तन लायी है। 73 वां संशोधन ग्रामीण स्थानीय निकायों एवं 74 वां संशोधन शहरी स्थानीय निकायों के लिए है। 73 वें संविधान संशोधन की मुख्य विशेषताएं निम्न प्रकार हैः –

जैसा कि संविधान के अनुच्छेद 40 में प्रतिष्ठापित है, इस संविधान संशोधन अधिनियम ने विकास योजना और कार्यान्वयन के लिए विशेष रूप से आर्थिक विकास और सामाजिक न्याय के लिए उपयुक्त स्तर पर पंचायत की शक्तियों और जिम्मेदारियों की स्थापना की परिकल्पना की।

सांसदों और विधायकों को मतदान का अधिकार (Voting Rights to MPs and MLAs):

सभी प्रत्यक्ष निर्वाचित सदस्यों, अध्यक्षों, सांसदों, विधायकों, पंचायतों के सदस्यों को पंचायतों की बैठक में मतदान करने का अधिकार होगा। हालाँकि, सांसद और विधायक इन पंचायतों के अध्यक्ष बनने से वंचित हैं और इन पंचायतों के अध्यक्ष के चुनाव में मतदान का अधिकार भी नहीं रख सकते हैं। सदस्यता के साथ–साथ अध्यक्ष के लिए न्यूनतम आयु इक्कीस वर्ष करने का प्रावधान है।

सीटों का आरक्षण (Reservation of Seats):

अधिनियम के अनुसार, किसी दिए गए क्षेत्र में उनकी आबादी के अनुपात में अनुसूचित जाति/जनजाति के लिए हर स्तर पर सीटों का आरक्षण का प्रावधान किया गया है । प्रारंभ में महिलाओं के लिए सीटों की कुल संख्या का एक तिहाई आरक्षण की व्यवस्था थी जिसे बाद में बढ़ाकर 50% कर दिया गया। इसी प्रकार, प्रत्येक स्तर पर पंचायत में अध्यक्षों के आधे पद महिलाओं के लिए आरक्षित होंगे। अनुसूचित जातियों/अनुसूचित जनजातियों के लिए प्रत्येक स्तर पर पंचायतों के अध्यक्षों की कुल संख्या राज्य में अनुसूचित जातियों/अनुसूचित जनजातियों की जनसंख्या के अनुपात में होगी। इसके अलावा, किसी भी राज्य की विधायिका पिछड़े वर्गों के पक्ष में किसी भी पंचायत या पंचायत में अध्यक्ष के कार्यालय में किसी भी स्तर पर सीटों के आरक्षण के लिए प्रावधान कर सकती है (अनुच्छेद 243D)।

प्रत्येक स्तर पर पंचायत के कार्यालय का कार्यकाल पांच साल के लिए होगा और यदि किन्हीं कारणों से पंचायत को पांच साल से पहले भंग किया गया हो या पांच साल के कार्यकाल की समाप्ति पर विघटन या समाप्ति की तारीख से छह महीने के भीतर नए चुनाव आयोजित किए जाने का प्रावधान इस संवैधानिक संशोधन में किया गया है (अनुच्छेद 243ई)।

वित्त आयोग (Finance Commission):

राज्य को प्रत्येक वर्ष के बाद करों, अनुदानों और पंचायती राज निकायों को दी गई सहायता के वितरण की समीक्षा करने के लिए संबंधित वित्त आयोग का गठन करना चाहिए। पंचायती राज निकायों को अनुदान के रूप में राज्य सरकारों से वित्त प्राप्त होगा। पंचायत निकाय अपने दायरे में आने वाली वस्तुओं पर कर, टोल और शुल्क लगाकर भी कमाई कर सकते हैं (अनुच्छेद 243H, I)।

राज्य निर्वाचन आयोग (State Election Commission):

73 वें संविधान संशोधन में व्यवस्था दी गई है कि राज्य अनुच्छेद 243 के तहत अपने क्षेत्र में मतदाता सूची के निर्माण, नियंत्रण, प्रकाशन और चुनाव के संचालन के लिए 'राज्य चुनाव आयोग' का गठन करेगा।

जिला योजना समिति (District Planning Committee):

74वें संशोधन के प्रावधान के अनुसार, जनसंख्या के अनुपात के आधार पर ग्रामीण और शहरी दोनों क्षेत्रों के निर्वाचित प्रतिनिधियों के प्रतिनिधित्व वाली एक जिला योजना समिति का गठन किया जाना है। इसका मुख्य कार्य स्थानीय आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए और जिले के समग्र विकास को ध्यान में रखते हुए पूरे जिले के लिए योजना तैयार करना है।

ग्राम पंचायत के प्रकार्य (Functions of Gram Panchayat):

पीने के पानी, कृषि, भूमि और जल संरक्षण से लेकर संचार, गरीबी उन्मूलन, परिवार कल्याण शिक्षा, पुस्तकालय और सांस्कृतिक गतिविधियाँ, सामुदायिक संपत्तियों का रखरखाव आदि जैसे स्थानीय महत्व के कार्यों की योजना निर्माण और कार्यान्वयन में पंचायती राज संस्थाओं को एक प्रभावी भूमिका प्रदान करने के लिए संविधान में 29 मदों वाली एक नई अनुसूची (11वीं अनुसूची) जोड़ी गई है। यह निम्न प्रकार है –

1. कृषि एवं कृषि विस्तार; 2. भूमि सुधार, भूमि सुधारों का कार्यान्वयन, भूमि चकबंदी और मृदा संरक्षण; 3. लघु सिंचाई, जल प्रबंधन और वाटरशेड विकास; 4. पशुपालन, डेयरी और मुर्गी पालन;
5. मछली पालन; 6. सामाजिक वानिकी और कृषि वानिकी; 7. लघु वन उपज;
8. खाद्य प्रसंस्करण उद्योगों सहित लघु उद्योग; 9. खादी एवं लघु ग्रामोद्योग; 10. ग्रामीण आवास;
11. पेयजल; 12. ईंधन और चारा; 13. सड़कें, पुलिया, पुल, फेरी, जलमार्ग और संचार के अन्य साधन;
14. बिजली के वितरण सहित ग्रामीण विद्युतीकरण; 15. गैर–पारंपरिक ऊर्जा संसाधन;
16. गरीबी उन्मूलन कार्यक्रम; 17. प्राथमिक और माध्यमिक विद्यालयों सहित शिक्षा;
18. तकनीकी प्रशिक्षण और व्यावसायिक शिक्षा; 19. प्रौढ़ और अनौपचारिक शिक्षा; 20. पुस्तकालय;
21. सांस्कृतिक गतिविधियां; 22.बाजार और मेले; 23. स्वास्थ्य और परिवार स्वच्छता, प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र और औषधालय; 24. परिवार कल्याण; 25. महिला एवं बाल विकास;
26. विकलांग एवं मंद बुद्धि लोगों सहित सामाजिक कल्याण;
27. कमजोर वर्गों विशेषकर अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति का कल्याण;
28. सार्वजनिक वितरण प्रणाली; 29. सामुदायिक क्षेत्र का रखरखाव।

73 वां संशोधन ग्रामीण जीवन के विकास में अधिक से अधिक लोगों की स्थानीय स्तर पर योजना निर्माण, क्रियान्वयन, सामाजिक अंकेक्षण व मूल्यांकन में सक्रिय व प्रभावी भूमिका निश्चित करने के लिए, लोगों को उनकी आवश्यकताओं, प्राथमिकताओं व संसाधनों की पहचान करने तथा निम्न जाति, जनजाति व महिलाओं की प्रत्यक्ष भागीदारी से सशक्तीकरण का अवसर व आधार प्रदान करने के लिए ग्राम सभा को संवैधानिक दर्जा व आवश्यक शक्ति, कर्तव्य, उत्तरदायित्व प्रदान करता है और ग्राम स्तर पर प्रजातान्त्रिक विकेन्द्रीकरण की दो मुख्य संस्थाओं– ग्राम पंचायत व ग्राम सभा को संवैधानिक दर्जा प्रदान कर जमीनी स्तर पर आमजन के दरवाजे तक लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण के सपने को साकार करता है।

संदर्भ (References):

1. Bandyopadhyay, Ghosh and Ghosh 2007. 'Dependency versus Autonomy: The Identify crisis of India's Panchayats', in Mahanty, Baun, and Mathew (eds), Grassroots Democracy In India and China, New Delhi : Sage.
2. अंबेडकर, बी. आर. 1967. संविधान सभा वाद विवाद, खण्ड 7, भारत सरकार प्रकाशन, दिल्ली।
3. Govt. of India. 1957. 'Report of the Study Team for Study of Community Project and National Extension Service (B-R-Mehta committee) planning commission, New Delhi.
4. Mathew, George (ed.), 2002. Panchayati Raj.; From Legislation to Movement, New Delhi : Concept Publishing Company.
5. Shukla, L.P. 1964, A History of Village Panchayat in India, Dharwar: Institute of Economic Research.
6. Maheshwari, B 1963. Studies in Panchayati Raj, Delhi: Metropolitan Book Company.
7. Govt. of India. 1977. Report of the committee on panchayati Raj Institutions, New Delhi: Ministry of Agriculture and irrigation, Department of Rural Development. (Ashok Mehta committee).

8. Govt. of India. 1977. Report of the committee on panchayati Raj Institutions, New Delhi: Ministry of Agriculture and irrigation, Department of Rural Development. (Ashok Mehta committee).
9. Govt. of India 1985. 'Report of the committee to Review the Existing Administration Arrangements for Rural Development and Poverty Alleviation Programmes (G.V.K. Rao committee), Ministry of Agriculture and irrigation, Department of Rural Development, Delhi.
10. Govt. of India 1986. 'The committee for the concept paper on panchayati Raj, (L.M. Singhvi committee) Department of Rural Development, Delhi.
11. थानवी, दौलतराज 2000. 'ग्राम स्वराज और पंचायतों का संवैधानिक स्वरूप', कुरूक्षेत्र, फरवरी, वर्ष 15, अंक 4।
12. Govt. of India, 1992. 'Seventy Third Amendment Act 1992', The Controller of Publication, Delhi.